शोध-चिंतन पत्रिका : सहयोगी विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित अर्धवार्षिक हिंदी ई शोध पत्रिका
अंक : 2; जनवरी-जून, 2021; पृष्ठ संख्या : 09-33

रहस्यवादी चेतना के आलोक में महादेवी वर्मा की कविताएँ

✍ पूजा शर्मा

शोध-सार :

हिन्दी-भारती की अनन्य पुजारिन कवयित्री महादेवी वर्मा (ई॰ 1907—ई॰ 1987) छायावादी काव्यधारा के बृहच्चतुष्टयी में से अन्यतम हैं। अपनी अमर सर्जनाओं के माध्यम से उन्होंने छायावादी काव्य-विशिष्टताओं में विशेष रूप से रहस्यवाद को एक प्रधान आयाम के तौर पर जोड़ते हुए आधुनिक काव्यधारा को समृद्ध दिशा प्रदान की। उनकी काव्य-कृतियाँ -- 'नीहार', 'रश्मि', 'नीरजा', 'सांध्यगीत' और 'दीपशिखा' न केवल उनकी काव्यानुभूति एवं काव्य-कला के क्रमशः ऊर्ध्वगामी स्वरूप को प्रकाशित करती हैं, बल्कि ये कृतियाँ कवयित्री की रहस्यवादी चेतना के स्वाभाविक एवं क्रमिक विकास के परिणाम भी हैं।

रहस्यवाद मानव-मन की उस जिज्ञासु प्रवृत्ति का परिणाम है जिसका क्षेत्र अध्यात्म-जगत और लक्ष्य आत्मा-परमात्मा की प्रणयानुभूति और ऐक्यानुभूति है एवं जिसकी अभिव्यक्ति प्रकृति-जगत के उपकरणों के माध्यम से सांकेतिक शब्दावली द्वारा की जाती है। यही रहस्यवादी चेतना महान कवयित्री महादेवी वर्मा की समूची काव्याभिव्यक्ति का केन्द्रीय तत्व है जिसके विविध वैचारिक रूपों में भारतीय परम्परा के दीर्घकालीन सूत्रों के साथ ही उनके मौलिक दृष्टिकोण के भी दर्शन होते हैं। वस्तुतः अपने निर्गुण-निराकार सर्वव्यापी प्रियतम की चिर विरहिणी कवयित्री महादेवी वर्मा की रहस्यानुभूति में न केवल उनकी एकनिष्ठ, निस्वार्थ एवं पूर्ण समर्पण की भावना निहित है, बल्कि उनकी प्रगाढ़ संवेदना, शुचितर करुणा एवं लोक-मंगलविधायिनी पीड़ा भी सन्निविष्ट हैं। प्रस्तुत शोधालेख में वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धतियों के माध्यम से विचाराधीन विषय पर समुचित अध्ययन किया गया है।

बीज-शब्द : *महादेवी वर्मा, रहस्यवादी चेतना, कविता, सर्वव्यापी प्रियतम, विरह-वेदना, लोक-मंगल।*

1. प्रस्तावना :

'आधुनिक युग की मीराँ' की आख्या से विभूषित बहुआयामी व्यक्तित्व की अधिकारिणी कवयित्री महादेवी वर्मा (ई॰ 1907--ई॰ 1987) छायावादी काव्यधारा के बृहच्चतुष्टयी में से अन्यतम हैं। बाबू जयशंकर 'प्रसाद', सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' और सुमित्रानन्दन पन्त की परम्परा में महादेवी वर्मा ने 'भारतीय अस्मिता की खोज' करने वाली छायावादी काव्यधारा के कथ्य एवं शिल्प दोनों पक्षों का अपनी अप्रतिम और अमर कृतियों के माध्यम से उज्ज्वलतम रूप प्रस्तुत किया। उन्होंने छायावादी काव्य-विशिष्टताओं में से रहस्यवाद को एक नए आयाम के रूप में जोड़ते हुए आधुनिक काव्यधारा को नयी दिशा प्रदान की। महान कवयित्री महादेवी वर्मा ने अपनी लेखन-कला के चमत्कार द्वारा सर्वजन के हृदय को द्रवित एवं आप्लावित करने वाली काव्य-कृतियों, निबंधों, रेखाचित्रों एवं संस्मरणों की रचना की और हिन्दी साहित्य-भण्डार को समृद्ध किया। अंग्रेजी और बंगला के रोमांटिक काव्य के छुटपुट प्रभाव के बावजूद नारी-हृदय की कोमलता तथा प्रखर बुद्धिमत्ता की अधिकारिणी महादेवी वर्मा की काव्याभिव्यंजना और बौद्धिक चेतना पूर्णतः भारतीय परम्परा के अनुकूल रही। इस पर टिप्पणी करते हुए प्रसिद्ध समीक्षक-विद्वान डॉ॰ शंभुनाथ सिंह ने लिखा है –

> महादेवी छायावाद के कवियों में औरों से भिन्न अपना एक विशिष्ट और निराला स्थान रखती हैं। इस विशिष्टता के दो कारण हैं : एक तो उनका कोमल हृदया नारी होना और दूसरा अंग्रेजी और बंगला के रोमांटिक और रहस्यवादी काव्य से प्रभावित होना। इन दोनों कारणों से एक ओर तो उन्हें अपने आध्यात्मिक प्रियतम को पुरुष मानकर स्वाभाविक रूप में अपनी स्त्री-जनोचित प्रणयानुभूतियों को निवेदित करने की सुविधा मिली, दूसरी ओर प्राचीन भारतीय साहित्य और दर्शन तथा सन्त युग के रहस्यवादी काव्य के अध्ययन और अपने पूर्ववर्ती तथा समकालीन छायावादी कवियों के काव्य के निकट का परिचय होने के फलस्वरूप उनकी काव्याभिव्यंजना और बौद्धिक चेतना शत-प्रतिशत भारतीय परम्परा के अनुरूप बनी रही।

(वर्मा, प्र. संपा. सं॰ 2043 : 435)

कवयित्री महादेवी वर्मा की साहित्यिक रुचि एवं प्रवृत्ति के बीजारोपन में उनके दार्शनिक और चिन्तनशील पिता एवं धार्मिक और विदुषी माता द्वारा प्रदत्त संस्कारों की महत्वपूर्ण भूमिका दृष्टिगोचर होती है। अपने समूचे जीवन-काल में कवयित्री ने कुल 236 गीतों की सर्जना करते हुए इन्हीं संस्कारों तथा अनुभूत्यात्मक विचारों को शब्दाभिव्यक्ति दी है। उनकी काव्य-कृतियों विशेषतः 'नीहार' (ई॰ 1930), 'रश्मि' (ई॰ 1932), 'नीरजा' (ई॰ 1935),

'सांध्यगीत'(ई॰ 1936) और 'दीपशिखा' (ई॰ 1942) में उनकी काव्यमय यात्रा, काव्यानुभूति तथा काव्य-कला के क्रमशः ऊर्ध्वगामी स्वरूप दृश्यमान होते हैं। 'नीहार' में सन् 1924 से सन् 1928 तक की चुनी हुई कविताएँ संकलित हैं जिनमें कवयित्री की कुतूहलमिश्रित वेदना की स्वाभाविक अभिव्यक्ति हुई है। 'रश्मि' सन् 1929 से सन् 1931 तक रचित गीतों का संग्रह है जिसमें सत्य की रश्मियों द्वारा कवयित्री के चिन्तन की चेतना जागृत हो उठती है। 'नीरजा' में सन् 1931 से लेकर सन् 1934 के भीतर रचित गीत संगृहीत हैं जिनमें कवयित्री दिन के उज्ज्वल प्रकाश में कमलिनी की भाँति अपने साधना-मार्ग पर अपना सौरभ बिखेर देती हैं। सन् 1934 से लेकर सन् 1936 तक रचित गीतों के संकलन 'सांध्यगीत' में कवयित्री महादेवी वर्मा की मानसिक एवं आध्यात्मिक साधना का राग समाविष्ट है। इसमें जीवन के संधिकाल की करुणार्द्रता और वैराग्य-भावना के साथ-साथ आत्मा की अपने आध्यात्मिक घर को लौट चलने की प्रवृत्ति विद्यमान है। 'दीपशिखा' में सन् 1936 से सन् 1942 के दौरान रचित गीत एवं कविताएँ संगृहीत हैं जिनमें रात के शान्त, स्निग्ध और शून्य वातावरण में आराध्य के सम्मुख जीवन-दीपक के जलते रहने की भावना अभिव्यक्त की गयी है। वस्तुतः ये काव्य-कृतियाँ महादेवी जी की रहस्याभिव्यक्ति के भी स्वाभाविक एवं क्रमिक परिणाम हैं।

बहुमुखी प्रतिभा की धनी कवयित्री महादेवी वर्मा के काव्य में छायावादी विशिष्टताएँ पूर्णरूपेण दृष्टिगोचर होती हैं, पर इनमें से रहस्यानुभूति उनके काव्य की एक ऐसी प्रवृत्ति के रूप में उभरी है, जो एक प्रकार से उनके समस्त काव्य-साधना-पथ की धुरी बनी और उस परम सत्य के अनुसंधान की ओर आद्योपांत उन्मुख रही। अपने सर्वव्यापी प्रियतम की चिरविरहिणी महादेवी वर्मा की रहस्य-भावना न केवल निर्गुण-निराकार प्रियतम के प्रति उनके एकनिष्ठ, अटल एवं पवित्र प्रेम का शब्दांकित रूप है, बल्कि उनकी प्रगाढ़ संवेदना, सर्वकल्याणकारिणी करुणा एवं लोक-मंगलविधायिनी पीड़ा का भी मूर्तिकरण है। इस दृष्टि से रहस्यवादी चेतना के आलोक में महीयसी कवयित्री महादेवी वर्मा की कविताओं का मूल्यांकनपरक अध्ययन नितांत महत्वपूर्ण है।

प्रस्तुत अध्ययन में एम.एल.ए शोध-पद्धति को अपनाते हुए मूलतः शोधपरक, व्याख्यात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धतियों का प्रयोग किया गया है। कवयित्री महादेवी वर्मा की रहस्यानुभूति यद्यपि उनके द्वारा सृजित समूचे साहित्य में परिलक्षित की जा सकती है, पर उनकी काव्य-कृतियों में विशेष रूप से उनकी इस अनूठी चेतना की स्वतःस्फूर्त अभिव्यक्ति हुई है तथा उन्हीं काव्य-कृतियों तक यह अध्ययन सीमित रहेगा।

2. विश्लेषण :

रहस्यवाद का सम्बन्ध परम्परागत रहस्यानुभूति से है जिसका सामान्य अर्थ है रहस्य की अनुभूति या कोई भी ऐसी अनुभूति जो रहस्यमयी हो, गोपनीय हो या विचित्र हो। किन्तु, लगभग सन् 1920 से हिन्दी-साहित्य-क्षेत्र में इसका प्रयोग अंग्रेजी के 'मिस्ट्री' (mystery), 'मिस्टिक' (mystic) और 'मिस्टिसिज़्म' (mysticism) के समानांतर होने लगा। वस्तुतः इन अंग्रेजी शब्दों के पर्यायवाची रूपों में ही 'रहस्य', 'रहस्यानुभूति' तथा 'रहस्यवाद' का साहित्यिक प्रयोग परिलक्षित किया जाता है।

मानव स्वभावतः जिज्ञासु प्राणी है। उसके इस जिज्ञासु मन में सदा से ही संसार के विपुल प्राकृतिक वैभव एवं इस वैभव के अदृश्य कर्ता के विषय में जानने की अतृप्त लालसा रही है। इसी रहस्यमयी सत्ता के साथ मनुष्यात्मा जब तादात्म्यता प्राप्त कर लेती है, तब उसे एक विचित्र प्रकार की अनुभूति होती है। यही अनुभूति-विशेष जब शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्ति प्राप्त करती है, तो वह रहस्यवाद की संज्ञा से अभिहित होती है। अतः रहस्यवाद उस विशिष्ट अनुभूति का द्योतक है जिसका क्षेत्र अध्यात्म-जगत है और लक्ष्य है आत्मा एवं परमात्मा की एकता की अनुभूति प्राप्त करना। यहाँ एक बात ध्यातव्य है कि रहस्यानुभूति के रूप में यह प्रवृत्ति-विशेष वैदिक काल से ही चलती आ रही है। परन्तु, एक वाद के रूप में इसका प्रादुर्भाव विश्वकवि रवीद्रनाथ ठाकुर-विरचित 'गीतांजली' के प्रकाशन के उपरान्त हुआ, जब 'गीतांजली' की भावभूमि पर अनेकानेक काव्य-रचनाएँ रची जाने लगीं। ऐसी रचनाओं में उभरने वाली रहस्य-भावना को यथोचित मर्यादा देने हेतु 'रहस्यवाद' शब्द का प्रयोग साहित्य-प्रेमियों द्वारा किया गया।

'रहस्यवाद' के स्वरूप को स्पष्ट करने के उद्देश्य से हिन्दी साहित्य-क्षेत्र के विभिन्न विद्वानों ने इसकी विभिन्न परिभाषाएँ निर्धारित की हैं, जिनमें से कुछेक उल्लेखनीय हैं –

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार –

> चिन्तन के क्षेत्र में जो अद्वैतवाद है, भावना के क्षेत्र में रहस्यवाद है।
>
> (गुप्त 1969 : 161)

आचार्य परशुराम चतुर्वेदी के शब्दों में –

> रहस्यवाद शब्द काव्य की एक धारा-विशेष को सूचित करता है। वह प्रधानतः उसमें लक्षित होने वाली उस अभिव्यक्ति की ओर संकेत करता है जो विश्वात्मक सत्ता की प्रत्यक्ष, गम्भीर एवं तीव्र अनुभूति के साथ सम्बन्ध रखती है।
>
> (गुप्त 1974 : 356)

महादेवी वर्मा के अनुसार –

> जब प्रकृति की अनेकरूपता में, परिवर्तनशील विभिन्नता में, कवि ने एक ऐसा तारतम्य खोजने

का प्रयास किया जिसका एक छोर किसी असीम चेतन और दूसरा उसके ससीम हृदय में समाया हुआ था तब प्रकृति का एक-एक अंश एक अलौकिक व्यक्तित्व लेकर जाग उठा। परन्तु इस सम्बन्ध में मानव-हृदय की सारी प्यास न बूझ सकी, क्योंकि मानवीय सम्बन्धों में जब तक अनुराग-जनित आत्म-विसर्जन का भाव नहीं घुल जाता तब तक वे सरस नहीं हो पाते और जब तक वह मधुरता सीमातीत नहीं हो जाती तब तक हृदय का अभाव नहीं दूर होता। इसी से इस अनेकरूपता के कारण पर एक मधुरतम व्यक्तित्व का आरोपन कर उसके निकट आत्म-निवेदन कर देना इस काव्य का दूसरा सोपान बना जिसे रहस्यमय रूप के कारण रहस्यवाद का नाम दिया गया।

(जैन, संपा. 2008 : 368)

डॉ॰ गोविन्द त्रिगुणायत के शब्दों में –

संक्षेप में हम रहस्यवाद को ब्रह्म के आध्यात्मिक स्वरूप से आत्मा की भावात्मक ऐक्यानुभूति के इतिहास का प्रकाशन कह सकते हैं।

(गुप्त 1969 : 161-162)

बाबू जयशंकर 'प्रसाद' के अनुसार –

काव्य में आत्मा की संकल्पनात्मक अनुभूति की मुख्य धारा का नाम रहस्यवाद है।

(गुप्त 1974 : 356)

वस्तुतः रहस्यवाद मानव-मन की जिज्ञासु प्रवृत्ति का सघन प्रकाशन है। यह मूल प्रवृत्ति 'जिज्ञासा' अद्वैतवादी विचारधारा पर आधृत है। इसका प्रकाशन प्रकृति-जगत के माध्यम से होता है। इस प्रक्रिया में मधुर व्यक्तित्व का आरोपन किया जाता है। ब्रह्म के साथ आत्मा अपनी ऐक्यानुभूति एवं प्रणयानुभूति के इतिहास को व्यक्त करती है। यह विशिष्ट अभिव्यक्ति सांकेतिक एवं गूढ़ शब्दावली द्वारा की जाती है।यह रहस्यानुभूति की प्रक्रिया सहसा उदित होने वाली वस्तु न होकर अनेक चरणों या सोपानों का परिणाम होती है। ये सोपान हैं – **i.** जिज्ञासा, **ii.** आस्था, **iii.** अद्वैत-भावना, **iv.** विरहानुभूति और **v.** मिलनानुभूति।

विद्वान-विचारकों ने रहस्यवाद के अनेक भेद-प्रभेद किए हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने दो प्रमुख भेद बतलाए हैं – साधनात्मक रहस्यवाद और भावनात्मक या काव्यात्मक रहस्यवाद। डॉ॰ गोविन्द त्रिगुणायत ने अनेकानेक भेदों की चर्चा की है, जैसे – आध्यात्मिक रहस्यवाद, प्रकृतिमूलक रहस्यवाद, प्रेममूलक रहस्यवाद, यौगिक रहस्यवाद आदि। डॉ॰ गणपतिचन्द्र गुप्त ने यथार्थानुमोदित रहस्यवाद और कल्पनाश्रित रहस्यवाद नाम से दो भेदों का उल्लेख किया है। वस्तुतः रहस्यवाद के ये भेद-प्रभेद विचार-क्षेत्र एवं पद्धति दोनों ही भावभूमियों पर आधारित हैं।

रहस्यवाद के स्वरूप पर विचार करते हुए छायावाद एवं रहस्यवाद के अन्तर पर भी आलोकपात करना समुचित होगा। कई विचारक-

विद्वान दोनों को एक समझ लेते हैं जो कि एक भ्रांति है। जहाँ एक ओर छायावाद का सम्बन्ध स्वच्छंदता की प्रवृत्ति, सौन्दर्यमुखता और लौकिक प्रणय से है, वहीं दूसरी ओर रहस्यवाद अद्वैत-भावना की प्रेरणा से अलौकिक प्रणयानुभूतियों की अभिव्यक्ति है। अतः दोनों के क्षेत्र मूलतः भिन्न-भिन्न हैं।

महान कवयित्री महादेवी वर्मा छायावादी काव्यधारा की अन्यतम समर्थ विभूति के रूप में प्रसिद्ध हैं और उनके काव्य में पाया जाने वाला रहस्यवाद उनकी समूची काव्याभिव्यक्ति का केन्द्रीभूत तत्व है, शेष प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति तो बस आनुषंगिक है। रहस्यवाद के असीम अनन्त लोक में सदा विचरण करने वाली कवयित्री महादेवी वर्मा की कविताओं में निहित इसी रहस्यवादी चेतना पर आगे विस्तारपूर्वक विवेचन किया जा रहा है।

2.1 महादेवी वर्मा की कविताओं में चित्रित रहस्यवाद के विविध रूप

समर्थ आलोचक-विद्वान आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने बिलकुल सही टिप्पणी की है --

> छायावादी कहे जाने वाले कवियों में महादेवी जी ही रहस्यवाद के भीतर रही हैं। उस अज्ञात प्रियतम के लिए वेदना ही इनके हृदय का भावकेन्द्र है जिससे अनेक प्रकार की भावनाएँ छूट-छूट कर झलक मारती रहती हैं।
>
> (शुक्ल सं॰ 2045 : 487)

यह सही है कि हिन्दी-साहित्य-जगत में कवयित्री महादेवी वर्मा छायावादी कवयित्री की अपेक्षा रहस्यवादी कवयित्री के रूप में अधिक चर्चित रही हैं। उनकी रहस्यवादी चेतना में साधनात्मक पद्धति के स्थान पर अनुभूति और भाव-प्रवणता की बहुतायत दृष्टिगोचर होती है। उन्होंने रहस्यवाद के अनुभूति-पक्ष की परम्परा को वेद एवं वेदान्त से जोड़ते हुए भी इसका निरूपण आधुनिक परिप्रेक्ष्य के अनुकूल किया है। उनका रहस्यवाद पराविद्या की अपार्थिवता, वेदान्त के अद्वैत की छाया, लौकिक प्रेम की तीव्रता और संत कबीर के सांकेतिक दाम्पत्य-भाव-सूत्र में बंधे हुए एक ऐसे निराले स्नेह-सम्बन्ध का अभिव्यक्त रूप है, जिसमें मनुष्य का पार्थिव प्रेमाभाव उदात्तीकृत होकर ऊर्ध्वगामी बनता जाता है। कवयित्री महादेवी वर्मा के काव्य में चित्रित इस रहस्यवाद के विविध रूपों में भारतीय परम्परा के दीर्घकालीन सूत्रों के साथ ही उनके मौलिक दृष्टिकोण के भी दर्शन होते हैं। यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि रहस्यवाद के ये रूप वैचारिक भूमि से संबद्ध हैं।

2.1.1 वैदिक रहस्य-भावना : भारतीय दर्शन की रहस्य-भावना का मूल मंत्र ही है -- ब्रह्म और जीव एक हैं। सहज ज्ञान, सहजानुभूति और सहज प्रेम-साधना द्वारा मानव-शरीर में व्याप्त उस परम तत्व की प्राप्ति हो सकती है और यही जीव-ब्रह्मैक्य साधक का लक्ष्य है। उपनिषदों में वर्णितानुसार अपने एकाकीपन से ऊब उठे परब्रह्म ने 'एकोऽहं बहुस्याम' की भावना की और संसार का क्रम चल पड़ा।

वेदों एवं उपनिषदों में ब्रह्म के प्रति व्यक्त जिज्ञासा-भाव एक प्रकार से कवयित्री महादेवी वर्मा

की रहस्यवादी चेतना के जागरण-गीत सरीखा है। 'नीरजा' में संकलित प्रस्तुत पंक्तियों में वे उस अज्ञात सत्ता के सम्बन्ध में जिज्ञासा और कौतूहल से भरकर पूछ बैठती हैं –

कौन तुम मेरे हृदय में ?

कौन मेरी कसक में नित

मधुरता भरता अलक्षित ?

कौन प्यासे लोचनों में

घुमड़ घिर झरता अपरिचित ?

स्वर्णस्वप्नों का चितेरा

नींद के सुने निलय में !

कौन तुम मेरे हृदय में ?

(जैन, संपा. 2008 : 49)

यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि कवयित्री महादेवी वर्मा ने इस वैदिक रहस्य-भावना को स्वीकार करते हुए भी भक्ति को अवलम्ब के रूप में ग्रहण किया है और इस प्रकार से अपने परब्रह्म को प्रियतम मानते हुए दाम्पत्य रागानुभूति प्रकट की है।

2.1.2 वेदान्त की अद्वैत-भावना : वेदान्त की अद्वैत-भावना ब्रह्म और जीव का अभिन्न सम्बन्ध मानती हुई आत्मा और परमात्मा का सम्बन्ध अंश-अंशी के रूप में स्वीकार करती है। माया के आवरण के हटते ही भिन्न भासित होने वाले आत्मा-परमात्मा तदाकार हो जाते हैं। कवयित्री महादेवी वर्मा के काव्य में अद्वैत-दर्शन का यह रूप परिलक्षित किया जा सकता है जहाँ वे नवीन रूपकों की योजना द्वारा अपनी हार्दिक अनुभूति को सजीव रूप प्रदान करती दिखलायी पड़ती हैं। मानवात्मा उस परमात्मा का अंश भी है और उसकी सृष्टि भी, उससे जुड़ी भी है और उससे पृथक भी। 'नीरजा' में संकलित 'बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ' शीर्षक कविता की निम्नलिखित पंक्तियों में कवयित्री आत्मा-परमात्मा के इसी शाश्वत सम्बन्ध का लेखा-जोखा लेती हुई कहती हैं –

बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ !

नींद थी मेरी अचल निस्पन्द कण-कण में,

प्रथम जागृति थी जगत के प्रथम स्पन्दन में,

प्रलय में मेरा पता पदचिह्न जीवन में,

शाप हूँ जो बन गया वरदान बंधन में,

कूल भी हूँ कूलहीन प्रवाहिनी भी हूँ।

(उपरिवत् : 52)

ध्यातव्य है कि कवयित्री महादेवी वर्मा ने अद्वैतवादी दर्शन का प्रभाव स्वीकार अवश्य किया है, परन्तु उन्होंने इसकी छाया मात्र ग्रहण की है एवं अनेक स्थलों पर जीव और ब्रह्म के सम्बन्ध को अद्वैत-द्वैत की भाव-परिधि के बाहर माना है, यथा –

चित्रित तू मैं हूँ रेखा-क्रम,

मधुर राग तू मैं स्वर-संगम,

तू असीम मैं सीमा का भ्रम,

काया छाया में रहस्यमय !

प्रेयसि प्रियतम का अभिनय क्या ?

(उपरिवत् : 55)

2.1.3 संत कवियों की रहस्य-भावना : निर्गुणोपासक कबीरदास, नानकदेव, दादूदयाल जैसे संत कवियों की विराट् परम्परा सिद्ध और नाथ-पंथी योगियों की रहस्य-भावना से प्रेरित-प्रभावित रही है। मूलतः साधनात्मक पद्धति पर आधारित उनकी रहस्य-भावना में अनुभूति-पक्ष की भी विद्यमानता देखी जा सकती है। संत कवियों की रहस्य-भावना की तीन दिशाएँ हैं – दार्शनिक सिद्धान्तों का प्रचार, दाम्पत्य भाव की अभिव्यक्ति और विरह-निवेदन। कवयित्री महादेवी वर्मा के काव्य में इनकी अभिव्यक्ति कमोबेश अवश्य दृष्टिगत होती है।

संत कवियों के समान कवयित्री महादेवी भी अद्वैत-दर्शन से प्रभावित रहीं। 'रश्मि' में संकलित निम्नोक्त पंक्तियों में उन्होंने आत्मा-परमात्मा के अद्वैत सम्बन्ध को व्यक्त करते हुए लिखा है–

तुम हो विधु के बिम्ब और मैं मुग्धा रश्मि अजान,

जिसे खींच लाते अस्थिर कर कौतूहल के बाण !

कलियों के मधुप्यालों से जो करती मदिरा पान ;

झाँक, जला देती नीड़ों में दीपक-सी मुस्कान।

(उपरिवत् : 39)

संत कवियों की चिन्तन-पद्धति के अनुरूप कवयित्री ने भी जीवन और जगत की अस्थिरता का वर्णन किया है –

निश्वासों का नीड़, निशा का

बन जाता जब शयनागार,

लुट जाते अभिराम छिन्न

मुक्तावलियों के बन्दनवार

तब बुझते तारों के नीरव नयनों का यह हाहाकार,

आँसू से लिख लिख जाता है 'कितना अस्थिर है संसार !

(वर्मा 1998 : 15)

लेकिन यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि जगत की अस्थिरता की बात करते हुए भी कवयित्री ने इस संसार की मादकता, सौन्दर्यमयता एवं उसके कण-कण में परिव्याप्त उस सर्वशक्तिमान प्रियतम की कल्पना भी की है।

'दुलहिन गावहूँ मंगलाचार, मेरे घर आज्यौ राजा राम भरतार' -- महात्मा कबीरदास ने अपने-

आपको आराध्य राम की बहुरिया के रूप में स्वीकार करते हुए जिस दाम्पत्य रागानुभूति की अभिव्यंजना की है, वही भावाभिव्यक्ति कवयित्री महादेवी वर्मा के काव्य में चित्रित रहस्यानुभूति में दृष्टिगत होती है। 'नीहार' में संकलित प्रस्तुत पंक्तियों में कवयित्री ने अपने निर्गुण निराकार सर्वव्यापक प्रिय के प्रति अपना अगाध अपनत्व प्रकट करते हुए कहा है –

बिछाती थी सपनों के जाल
तुम्हारी वह करुणा की कोर,
गई वह अधरों की मुस्कान
मुझे मधुमय पीड़ा में बोर;
भूलती थी मैं सीखे राग
बिछलते थे कर बारम्बार,
तुम्हें तब आता था करुणेश !
उन्हीं मेरी भूलों पर प्यार !

(उपरिवत् : 9)

कवयित्री महादेवी वर्मा की रहस्याभिव्यक्ति में संत कवियों की भाँति अपने प्रियतम के प्रति विरह-निवेदन भी दृष्टिगोचर होता है। अपने अज्ञात प्रियतम के प्रति सनातन विरह के मधुर एवं मर्मस्पर्शी चित्र अंकित करती हुई कवयित्री ने इस अनादि एवं अनन्त वियोग के इतिहास को निम्नोक्त शब्दों में प्रस्तुत किया है –

शून्य मेरा जन्म था
अवसान है मुझको सवेरा ;
प्राण आकुल के लिए
संगी मिला केवल अँधेरा ;
मिलन का मत नाम ले मैं विरह में चिर हूँ !

(जैन, संपा. 2008 : 84)

2.1.4 छायावादी कवियों की रहस्य-भावना : कवयित्री महादेवी वर्मा की रहस्यवादी चेतना पर समकालीन छायावादी कवियों की रहस्यवादी भाव-प्रवृत्ति का भी प्रभाव परिलक्षित किया जा सकता है। जयशंकर 'प्रसाद', सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' और सुमित्रानन्दन पन्त प्रभृति कवियों की रहस्य-भावना में प्रकृति-जगत के प्रति आस्था एवं जिज्ञासा के भाव देखे जाते हैं। इन कवियों ने उस सर्वव्यापक परम तत्व के दर्शन इस समूची प्रकृति में ही करने का प्रयास किया है। एक ओर महाकवि 'प्रसाद' उस अव्यक्त परम सत्ता के प्रति कौतूहल-मिश्रित आस्था व्यक्त करते हुए कह पड़ते हैं–

सिर नीचा का किसकी सत्ता,
सब करते स्वीकार यहाँ ?
सदा मौन हो प्रवचन करते,
जिसका वह अस्तित्व कहाँ ?

(गुप्त 1974 : 362)

वहीं दूसरी ओर, महाप्राण 'निराला' भी उस अलौकिक सत्ता के साथ अपना नैकट्य सम्बन्ध स्थापित करते हुए कहते हैं –

तुम तुंग-हिमालय-शृंग
और मैं चंचल-गति सुर-सरिता।

(निराला 1992 : 67)

'प्रकृति के सुकुमार कवि' सुमित्रानन्दन पन्त भी दिव्य लोक से किसी अज्ञात शक्ति के 'मौन निमंत्रण' पर व्याकुल होकर कह उठते हैं --

स्तब्ध ज्योत्स्ना में जब संसार
चकित रहता शिशु-सा नादान,
विश्व की पलकों पर सुकुमार
विचरते हैं जब स्वप्न अजान ;
न जाने, नक्षत्रों से कौन
निमंत्रण देता मुझको मौन !

(सिंह, संपा. 1998 : 92)

महीयसी कवयित्री महादेवी वर्मा ने भी अपने गीतों एवं कविताओं में प्रकृति-जगत में अपने सर्वव्यापी प्रियतम को खोजने का प्रयास किया है। प्रकृति के अणु-परमाणु, वृक्ष-लताओं, नभ के ज्योतिष्मान् नक्षत्रों, रश्मि सभी में वे अपने उस अज्ञात प्रिय की झाँकी निहारती हैं, यथा –

चुभते ही तेरा अरुण बान !
बहते कन-कन से फूट-फूट,
मधु के निर्झर से सजल गान !
इन कनक रश्मियों में अथाह,
लेता हिलोर तम-सिंधु जाग ;
बुदबुद से वह चलते अपार ;
उसमें विहंगों के मधुर राग,
बनती प्रवाल का मृदुल कूल,
जो क्षितिज-रेखा थी कुहर-म्लान !

(वर्मा 1976 : 111)

पूर्वोक्त विवेचित रूपों के अतिरिक्त साधना-पद्धति से संबन्धित दो प्रचलित रूपों का उल्लेख भी किया जा सकता है – साधनात्मक रहस्य-भावना और भावनात्मक या काव्यात्मक रहस्य-भावना। इन दोनों रूपों पर संक्षिप्त प्रकाश डाला जा रहा है –

2.1.5 साधनात्मक रहस्य-भावना : साधनात्मक रहस्यवाद मूलतः शास्त्र एवं सम्प्रदाय की बंधी-बंधायी परिपाटी पर चलता है जिसमें नाथ-पंथियों एवं सिद्ध कवियों द्वारा स्वीकार की गयी हठयोगी साधना-पद्धति, सहस्रार, कुण्डलिनी-चक्र आदि के साथ ही वैष्णव-भक्ति द्वारा ग्रहण की गयी नवधा भक्ति-पद्धति भी सन्निविष्ट है। कवयित्री महादेवी वर्मा ने अपने किन्हीं गीतों में यद्यपि पूजा-अर्चना

जैसे बाह्य विधि-विधानों का उल्लेख अवश्य किया है, लेकिन उन्होंने ऐसे स्थूल कर्मकाण्डों की अत्यधिक प्रयोजनीयता को नकारते हुए एक सूक्ष्म मानसिक स्तर की साधना पर भी बल दिया है। उन्होंने अपने असीम प्रियतम को अपने ससीम एवं लघुतम जीवन में ही परिव्याप्त माना है।

वस्तुतः कवयित्री की रहस्याभिव्यक्ति में ब्रह्म-जीव की प्रणयानुभूति एवं ऐक्यानुभूति का माधुर्य ही सर्वत्र व्याप्त है, तात्विक मान्यताओं का उल्लेख नाम-मात्र के लिए हुआ है। इस सन्दर्भ में प्रसिद्ध समीक्षक-विद्वान डॉ॰ गणपतिचन्द्र गुप्त की टिप्पणी प्रणिधानयोग्य है –

> उनकी साधना बाह्य विधि-विधानों एवं स्थूल कर्म-काण्ड की ही नहीं है, अपितु वह एक अत्यन्त सूक्ष्म मानसिक स्तर की साधना है। उस साधना के अंग हैं – अपनी वासनाओं, तृष्णाओं एवं कामनाओं पर विजय प्राप्त करना, अपने अहं को विसर्जित करके लोक-सेवा में अर्पित कर देना, दूसरों के दुःख को बांटकर अपनी आत्मा का विस्तार करना, महान लक्ष्य की साधना एवं अलौकिक प्रभु की प्रतीक्षा में दीप की भाँति जलते-जलते क्षीण होकर मिट जाना आदि। इन सबका संकेत उन्होंने बार-बार अपने काव्य में किया है।
>
> (गुप्त 1969 : 91-92)

2.1.6 भावनात्मक रहस्य-भावना : भावनात्मक या काव्यात्मक रहस्य-भावना में ससीम का असीम से, अन्त का अनन्त के साथ प्रणय-ग्रंथन किया जाता है जिसमें विरह-निवेदन की प्रधानता रहती है। महादेवी वर्मा के काव्य में अभिव्यंजित रहस्यानुभूति में इसी भावनात्मक पक्ष की विद्यमानता है। चिन्तनशीलता एवं भावात्मकता के आधार पर भावनात्मक रहस्यवाद के दो भेद किए जाते हैं – चिन्तनप्रधान रहस्य-भावना (कबीरदास, 'निराला', 'प्रसाद' आदि द्वारा अभिव्यक्त) और भावप्रधान रहस्य-भावना (मीराँबाई, महादेवी वर्मा, पन्त आदि द्वारा अभिव्यक्त)।

कवयित्री महादेवी वर्मा के काव्य में निरूपित रहस्य-भावना में पूर्व-प्रचलित परम्परा का निर्वहण तो है ही, साथ-ही-साथ उनकी वेदनासिक्त विरहाकुलता-समन्वित रहस्यानुभूति के संस्पर्श के फलस्वरूप उसमें युगानुरूप नूतनता का समायोजन भी दर्शनीय है।

2.2 महादेवी वर्मा की कविताओं में व्यक्त रहस्यवादी चेतना के विविध सोपान

रहस्यवाद जीवात्मा और परमात्मा के मिलन का साधन है। परमात्मा तक पहुँचने के लिए आत्मा को कई सोपानों या चरणों को पार करना पड़ता है। प्रेममार्गी सूफ़ी कवियों ने इन सोपानों को 'बसेरे' कहा है। कवयित्री महादेवी वर्मा की रहस्यवादी चेतना का क्रमिक विकास भी इन्हीं

सोपानों से होकर ऊर्ध्वगामी होता चलता है। उनके गीतों एवं कविताओं में इन सोपानों या चरणों की स्पष्ट व्यंजना दृष्टिगोचर होती है।

2.2.1 जिज्ञासा : मनुष्यात्मा जब किसी अदृश्य, अज्ञात एवं विराट् सत्ता के प्रति कुतूहल, विस्मय तथा जिज्ञासा के भावों द्वारा आवेष्टित रहती है, तो वह रहस्यवाद का प्रथम सोपान कहलाता है। कवयित्री महादेवी वर्मा की 'नीहार' शीर्षक कृति उनकी इसी अवस्था की द्योतिका है जहाँ उन्होंने स्वयं लिखा है –

> नीहार के रचनाकाल में मेरी अनुभूतियों में वैसी ही कौतूहल-मिश्रित वेदना उमड़ आती थी, जैसी बालक के मन में दूर दिखायी देने वाली अप्राप्य सुनहली उषा और स्पर्श से दूर सजल मेघ के प्रथम दर्शन से उत्पन्न हो जाती है।

(गुप्त 1969 : 207)

अपने गीतों एवं कविताओं में कवयित्री ने ब्रह्म की सत्ता के प्रति जिज्ञासा की अनुभूति प्रकट की है। वे इस समस्त प्रकृति-जगत में परमात्मा की छाया का आभास पाती हुई कह उठती हैं –

ढुलकते आँसू सा सुकुमार

बिखरते सपनों सा अज्ञात,

चुरा कर उषा का सिन्दूर

मुस्कुराया जब मेरा प्रात,

छिपा कर लाली में चुपचाप

सुनहला प्याला लाया कौन ?

(वर्मा 1998 : 18)

इस सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय है कि कवयित्री की रहस्यवादी चेतना में यह जिज्ञासा-भाव अपनी किशोरावस्था में न होकर पूर्ण-पर्यवसित अवस्था – 'परम सत्ता के प्रति अडिग आस्था' में परिवर्तित हो गया है। इसी दृढ़ आस्था की अभिव्यंजना महादेवी वर्मा की कविताओं में अपने पूर्ण गाम्भीर्य के साथ प्रस्फुटित हो उठी है –

रजत रश्मियों की छाया में धूमिल घन सा वह आता !

इस निदाघ से मानस में करुणा के स्रोत बहा जाता।

उसमें मर्म छिपा जीवन का,

एक तार अगणित कम्पन का,

एक सूत्र सबके बन्धन का,

संसृति के सूने पृष्ठों में करुण काव्य वह लिख जाता।

(वर्मा 1976 : 55)

2.2.2 सर्ववाद की स्थिति : रहस्यवाद के दूसरे चरण में कवयित्री को सम्पूर्ण प्रकृति-जगत में अपने निराकार सर्वशक्तिमान प्रियतम की सत्ता परिलक्षित होने लगती है। सृष्टि के कण-कण, प्रकृति के प्रत्येक पदार्थ -- रवि, शशि, तारे, चपला, वन, निर्झर,

लताएँ सभी में उस परम सत्ता का आभास करती साधिका महादेवी वर्मा अपने अज्ञात प्रियतम की दिव्यता एवं महत्ता की अनुभूति प्राप्त कर कह पड़ती हैं –

रवि-शशि तेरे अवतंस लोल,

सीमंत-जटित तारक अनमोल,

चपला विभ्रम, स्मित इन्द्रधनुष,

हिमकण बन झरते स्वेद-निकर !

(जैन, संपा. 2008 : 76)

इतना ही नहीं, कवयित्री को उस अज्ञात प्रियतम का दिव्य संदेश भी सुनायी पड़ता है। 'नीरजा' में संकलित प्रस्तुत काव्य-पंक्तियाँ इसी भाव से आपूरित हैं --

सुन प्रिय की पद-चाप हो गयी

पुलकित यह अवनी !

(उपरिवत् : 45)

2.2.3 दाम्पत्य-सम्बन्ध-स्थापन : कवयित्री महादेवी वर्मा की रहस्य-भावाभिव्यक्ति के तीसरे चरण में वे अपने निर्गुण-निराकार सर्वव्यापी परम तत्व के साथ सम्बन्ध निरूपित करती हुई उन्हें अपने प्रियतम के रूप में ग्रहण करती हैं। 'प्रिय', 'प्रियतम', 'असीम', 'करुणेश', 'देव', 'प्राण' आदि शब्दों से आख्यायित कवयित्री के वे अज्ञात आलम्बन उनकी प्रणयानुभूति के आधार हैं। अपने-आपको उसी अज्ञात प्रियतम की 'अखण्ड सुहागिनी' स्वीकार करने वाली कवयित्री वर्मा ने इस अनुरागमयी अनुभूति को कुछ इस प्रकार शब्दों में बाँधा है –

सखि ! मैं हूँ अमर सुहाग भरी,

प्रिय के अनन्त अनुराग भरी।

(उपरिवत् : 89)

2.2.4 लघुत्व की अनुभूति : अपनी रहस्यानुभूति के पथ पर आगे बढ़ती हुई कवयित्री ज्यों-ज्यों अपने निराकार सर्वव्यापी प्रियतम की महत्ता से परिचित होती जाती हैं, समस्त प्रकृति-जगत में उनकी छवि निहारती हैं, त्यों-त्यों उन्हें अपनी लघुता एवं दीनता का अनुभव होता जाता है। इस सोपान पर पहुँचकर वे प्रियतम के अपार सौन्दर्य की विराट् छवि द्वारा अभिभूत हो उठती हैं। 'रश्मि' में संकलित निम्नोक्त काव्य-पंक्तियाँ इसी भाव की शब्दाभिव्यक्ति हैं–

पिघल गिरि से विशाल बादल,

न कर सकते जिसको चंचल ;

तड़ित की ज्वाला घन-गर्जन,

जगा पाते न एक कम्पन ;

उसी नभ सा क्या वह अविकार –

और परिवर्तन का आधार ?

पुलक से उठ जिसमें सुकुमार ;

लीन होते असंख्य संसार !

(उपरिवत् : 42)

उस असीम प्रियतम के अपरिसीम सौन्दर्य एवं विराटता के समक्ष कवयित्री को अपना लघुतम जीवन अपने उसी प्रियतम का सुन्दर मन्दिर-सा भासित होता है --

क्या पूजन क्या अर्चन रे ?

उस असीम का सुन्दर मन्दिर मेरा लघुतम जीवन रे !

मेरी श्वासें करती रहतीं नित प्रिय का अभिनन्दन रे !

(वर्मा 1976 : 45)

2.2.5 विरहानुभूति : लौकिक प्रणय के प्रतिकूल रहस्यानुभूति का आरम्भ प्रायः विरहानुभूति से होता है; संयोग की अनुभूति तो साधक को सिद्धि प्राप्त होने के अनन्तर ही होती है। पर कवयित्री महादेवी वर्मा पर यह बात पूर्णतः लागू नहीं होती। डॉ॰ गणपतिचन्द्र गुप्त की यह मान्यता है कि कवयित्री के काव्य से यह प्रतीत होता है कि उनके दिव्य प्रेम का आरम्भ ही प्रारम्भिक संयोग से हुआ है। यद्यपि इस संयोग का रूप स्पष्ट नहीं है – वह दिवा-स्वप्न के रूप में भी हो सकता है, रात्रि के स्वप्न के रूप में भी हो सकता है या किसी अन्य रूप में भी। 'नीहार' में संकलित 'विसर्जन' शीर्षक कविता में इन प्रणयानुभूतियों के प्रस्फुटन के संकेत स्पष्ट मिलते हैं – जीवन के नैराश्य में दिव्य प्रेम का मधुर संगीत संचार करते हुए कवयित्री के प्रियतम इस पार आए हैं –

कली से कहता था मधुमास

'बता दो मधु मदिरा का मोल';

झटक जाता था पागल वात

धूल में तुहिन कणों के हार,

सिखाने जीवन का संगीत

तभी तुम आये थे इस पार।

(वर्मा 1998 : 9)

प्रियतम के साथ प्रथम साक्षात्कार के उपरान्त कवयित्री के लौकिक भावों में उदात्तीकरण होता चलता है, उनके प्रेमानुभावों में गूढ़ता एवं प्रगाढ़ता बढ़ती जाती है। लेकिन उस सर्वव्यापी प्रियतम के सम्पर्क की प्रारम्भिक कहानी एकबारगी आरम्भ होकर ही रह जाती है। बस एक बार के लिए प्रणय-वेदना का संचार करने हेतु इस जीवन में आकर कवयित्री के प्राणप्रिय उनके सम्मुख केवल प्रतीक्षा ही प्रतीक्षा छोड़ जाते हैं। उसी दिन से कवयित्री के जीवन में प्रणय के उन्माद, विरह की आकुलता, पीड़ा के साम्राज्य एवं रुदन की मूक-व्यथा का संचार हो जाता है। 'नीहार' में संकलित 'मिलन' शीर्षक कविता की निम्नोक्त पंक्तियाँ इसी भाव की अभिव्यक्ति हैं –

पीड़ा का साम्राज्य बस गया

उस दिन दूर क्षितिज के पार,

मिटता था निर्वाण जहाँ

नीरव रोदन था पहरेदार !

(उपरिवत् : 12)

अलौकिक प्रणय-मिलन की प्रारम्भिक कहानी के बीतते ही, कवयित्री की रहस्यवादी चेतना विरह के अगम-अगाध सागर के हिलोरों से टकराती किनारे की खोज करती हुई दिखलायी पड़ती है। विरह के इसी सागर में कवयित्री सदा निमज्जित रहने लगती हैं -- मिलन की दिव्य अनुभूति, मोक्ष का परम आस्वाद भी उन्हें वे आनन्दाश्रु नहीं दे पाता जो प्रियतम का विरह उन्हें दे जाता है। तभी तो वे कह उठती हैं – "मिलन का मत नाम ले मैं विरह में चिर हूँ !" कवयित्री महादेवी वर्मा के काव्य में अभिव्यंजित उनकी रहस्यवादी चेतना में विरहानुभूति एवं वेदनानुभूति की प्रधानता इसीलिए भी है क्योंकि वे मिलन एवं मोक्ष की आकांक्षी नहीं हैं। वे तो बस अपने उस निर्गुण-निराकार प्रियतम के प्रेम में ही सदा निमज्जित रहकर उनके प्रति विरह-निवेदन करते रहना चाहती हैं।

कवयित्री की इस विरहानुभूति में भारतीय कामशास्त्र-सम्मत विरह की दस दशाओं की विद्यमानता देखी जा सकती है। प्रियतम के सान्निध्य की अभिलाषा, उनके प्रति चिन्ता, उनके साथ व्यतीत क्षणों की स्मृति, उनका गुणानुकीर्तन, उनके विरह में उद्विग्नता, उन्माद अवस्था, प्रलाप की स्थिति, विरहातिरेक में व्याधि एवं जड़ता का आक्रमण और उसके अनन्तर मूर्छा या मरण की अवस्था -- सभी का सहज चित्रण एवं प्रस्फुटन कवयित्री महादेवी वर्मा की कविताओं में दृष्टिगोचर होता है।

पुनर्मिलन की अभिलाषा में कवयित्री अपने प्रियतम को सदा-सर्वदा के लिए प्राप्त करने हेतु जागृति का आह्वान कर उसे चिरनिद्रा बन जाने की इच्छा प्रकट करती हैं –

मेरे जीवन की जागृति !

देखो फिर भूल न जाना,

जो वे सपना बन आवें

तुम चिरनिद्रा बन जाना !

(उपरिवत् : 57)

प्रियतम की विरहाग्नि में तपती कवयित्री शरीर-रूपी इस पिंजर से मुक्ति के लिए प्रलाप करती हुई कहती हैं –

कीर का प्रिय आज पिंजर खोल दो,

हो उठी हैं चंचु छूकर,

तीलियाँ भी वेणु सस्वर;

बंदिनी स्पंदित व्यथा ले,

सिहरता जड़ मौन पिंजर !

(जैन, संपा. 2008 : 87)

केवल इतना ही नहीं, अपने प्रियतम की निष्ठुरता पर विरहिणी कवयित्री का वेदनासिक्त हृदय कराह उठता है और वे उपालम्भ देती हुई कहती हैं –

पीड़ा टकरा कर फूटे

घूमे विश्राम विकल सा,

तम बढ़े मिटा डाले सब

जीवन काँपे दलदल सा।

फिर भी इस पार न आवे

जो मेरा नाविक निर्मम,

सपनों से बाँध डुबाना

मेरा छोटा सा जीवन !

(वर्मा 1998 : 37)

महादेवी वर्मा की इस विरहाभिव्यक्ति में गर्व-भावना का सन्निवेश भी लक्षित होता है। अपने वेदना-विह्वल, त्यागपूर्ण एवं एकान्त जीवन-साधना की महत्ता को अनुभूत करती हुई कवयित्री ने अपने भावों की बड़ी ही सुन्दर अभिव्यक्ति की है –

मेरी लघुता पर आती

जिस दिव्य-लोक को व्रीड़ा,

उसके प्राणों से पूछो

वे पाल सकेंगे पीड़ा ?

उनसे कैसे छोटा है

मेरा यह भिक्षुक जीवन ?

उनमें अनन्त करुणा है

इसमें असीम सूनापन !

(उपरिवत् : 28)

अस्तु, महादेवी वर्मा की रहस्य-भावना में ही नहीं, अपितु उनके समग्र साधनामय जीवन-पथ में इसी विरह की सद्य-अवस्थिति है। उनके काव्य में उनकी इस अश्रुसिक्त अनुभूति का मूर्तित रूप सर्वत्र विद्यमान है –

विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात !

वेदना में जन्म करुणा में मिला आवास ;

अश्रु चुनता दिवस इसका, अश्रु गिनती रात !

जीवन विरह का जलजात !

(जैन, संपा. 2008 : 51)

2.2.6 मिलनानुभूति : रहस्यवाद के क्षेत्र में मिलन की अनुभूति को अन्तिम सोपान या चरण माना जाता है। कवयित्री महादेवी वर्मा के काव्य में यह अनुभूति प्रारम्भिक रूप में प्रस्फुटित अवश्य होती है, लेकिन उसके अनंतर केवल विरह की ही प्रबलता दृष्टिगोचर होती है। कवयित्री की रहस्य-भावना में अपने प्रियतम के साथ मिलनानुभूति अनेक रूपों में अनेक स्थलों पर अभिव्यंजित हुई है। साधना के उच्च शिखर पर पहुँचकर कवयित्री अपने प्रियतम के साथ

नैकट्य एवं तादात्म्य का अनुभव करती हैं, पर इसे मिलन की अनुभूति नहीं कहा जा सकता। यह विरह एवं मिलन की अन्विति मात्र है – एक ऐसी दोहरी स्थिति जिसकी व्यंजना उनकी अनेक कविताओं में हुई है। ऐसा ही एक स्थल द्रष्टव्य है जहाँ अपनी एक कविता 'पंथ होने दो अपरिचित' में कवयित्री मिलन के साथ विरह की चिर विद्यमानता की ओर संकेत करती हैं –

पंथ होने दो अपरिचित प्राण रहने दो अकेला !

....

हास का मधु-दूत भेजो,

रोष की भ्रू-भंगिमा पतझर को चाहे सहेजो !

ले मिलेगा उर अचंचल,

वेदना-जल, स्वप्न-शतदल ;

जान लो वह मिलन एकाकी

विरह में है दुकेला !

(उपरिवत् : 91)

कवयित्री की यह मिलनानुभूति कई रूपों में अभिव्यक्त हुई है। कभी तो बाह्य-प्रकृति में अपने प्रियतम के साथ तद्रूपता की स्थिति का अनुभव करती हुई वे दिखायी पड़ती हैं –

नीलम मरकत के संपुट दो

जिनमें बनता जीवन-मोती,

इसमें ढलते सब रंग-रूप

उसकी आभा स्पन्दन होती !

जो नभ में विद्युत मेघ बना वह रज में अंकुर हो निकला !

(सिंह, संपा. 1998 : 124)

या फिर कभी वे अपने अंतर्जगत में ही प्रियतम से मिलन की सुखद अनुभूति के उल्लास से भर उठती हैं –

कौन बंदी कर मुझे अब

बंध गया अपनी विजय में ?

कौन तुम मेरे हृदय में ?

(जैन, संपा. 2008 : 49)

कभी स्वप्न-जगत में विचरण करते हुए उन्हें उस मिलन का साक्षात्कार हो जाता है –

तुम्हें बाँध पाती सपने में !

तो चिर जीवन-प्यास बुझा

लेती उस छोटे क्षण अपने में !

(उपरिवत् : 47)

कौन आया था न जाने

स्वप्न में मुझको जगाने ;

याद में उन अंगुलियों की

हैं मुझे पर युग बिताने ;

(उपरिवत् : 84)

महान कवयित्री महादेवी वर्मा की कविताओं में मिलन की स्पष्ट छवि यद्यपि दृश्यमान नहीं होती, पर वे महामिलन की ओर अग्रसर होती अवश्य दिखलायी पड़ती हैं। 'दीपशिखा' शीर्षक काव्य-संकलन की एक कविता की निम्नोक्त पंक्तियाँ कवयित्री के इसी महामिलन की साक्षात् मूर्तिकरण हैं। पंक्तियों का मूल प्रतिपाद्य है – जीवन की साधना का वह अन्तिम क्षण जब इस लौकिक जीवन की समाप्ति के बाद एक लोकोत्तर आनन्दमय चेतना का आभास होने लगता है। लेकिन कवयित्री ने अपनी काव्य-कला की विलक्षणता द्वारा उसमें ऐसे अप्रस्तुतों की संयोजना की है कि अर्थों के परत-दर-परत खुलते चले जाते हैं। पहला अर्थ है वह प्रातःकाल जिसमें तारे एवं चन्द्रमा की किरणें धूमिल होने लगती हैं और वासंती प्रकाशवाले सूर्य का रथ क्षितिज के उस ओर से आता दिखायी देता है। दूसरा अर्थ है वह पतझर जिसकी समाप्ति की बेला में कुसुमों एवं पल्लवों के झर जाने के बाद वसन्त के आगमन की सूचना मिलने लगती है। आलोक और तम की संधि का मृत्यु के लिए और नभ का चेतना के लिए प्रयोग करते हुए कवयित्री ने अर्थ-गाम्भीर्य के साथ अपनी रहस्यवादी चेतना के चरम स्वरूप को निरूपित किया है –

झर चुके तारक-कुसुम जब,

रश्मियों के रजत पल्लव,

सन्धि में आलोक-तम की क्या नहीं नभ जानता तब,

पार से अज्ञात वासन्ती,

दिवस-रथ चल चुका है।

(वर्मा 1976 : 33)

इस प्रकार कवयित्री महादेवी वर्मा की रहस्यवादी चेतना जिज्ञासा-जनित आस्था के साथ सर्ववाद की स्थिति में विश्वास रखकर उस परम प्रियतम की विराटता की अनुभूति प्राप्त करती हुई उनके साथ रागात्मकता स्थापित करती है। इस रागात्मक भावना में अपने लघुत्व का अनुभव विद्यमान है और है विरहानुभूति का अथाह सागर जिससे होती हुई वे अंततः अपने उस सर्वव्यापी प्रियतम में पूर्णतः तदाकार होने हेतु अग्रसर होती हैं।

2.3 महादेवी वर्मा की रहस्यवादी चेतना के प्रमुख तत्व

अपने सर्वव्यापक प्रियतम की प्रेममिश्रित रहस्यानुभूति में सदा निमज्जित रहने वाली कवयित्री महादेवी वर्मा की रहस्यवादी चेतना के कुछेक प्रमुख तत्व हैं जिनके फलस्वरूप उनकी यह भावना दीर्घकालीन परम्परा की विशिष्टताओं से युक्त होते हुए भी नूतन है। रहस्यवादी चेतना के इन प्रमुख तत्वों का उल्लेख करते हुए कवयित्री ने स्वयं अपने 'रहस्यवाद' शीर्षक निबंध में लिखा है–

आज गीत में हम जिसे रहस्यवाद के रूप में ग्रहण कर रहे हैं, वह इन सब की विशेषताओं से युक्त

> होने पर भी उन सबसे भिन्न है। उसने पराविद्या की अपार्थिवता ली, वेदान्त के अद्वैत की छाया मात्र ग्रहण की, लौकिक प्रेम से तीव्रता उधार ली और इन सबको कबीर के सांकेतिक दाम्पत्य-भाव-सूत्र में बाँधकर एक निराले स्नेह-संबंध की सृष्टि कर डाली, जो मनुष्य के हृदय को पूर्ण अवलंबन दे सका, उसे पार्थिव प्रेम के ऊपर उठा सका तथा मस्तिष्क को हृदयमय और हृदय को मस्तिष्कमय बना सका।
>
> (जैन, संपा. 2008 : 368-369)

अतः कवयित्री की रहस्यवादी चेतना के प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं –

2.3.1 पराविद्या की अपार्थिवता : इसकी स्पष्ट अभिव्यक्ति कवयित्री के परम सत्ता एवं प्रकृति-विषयक चिन्तन में दृष्टिगोचर होती है।

2.3.2 वेदान्त का अद्वैत-दर्शन : वेदान्त के अद्वैतवादी दर्शन के आधार पर कवयित्री ने जीव-ब्रह्मैक्य को अवश्य स्वीकार किया है, परन्तु उन्होंने वेदान्त के इस दर्शन की छाया मात्र ग्रहण की है।

2.3.3 लौकिक प्रेम की तीव्रता : अपने निर्गुण, निराकार, सर्वव्यापी प्रियतम के प्रति व्यक्त रागात्मकता एवं विरहानुभूति की सघनता हेतु कवयित्री ने लौकिक प्रेम की तीव्रता को अवश्य आधार बनाया है लेकिन उसका उदात्तीकृत रूप ही उनकी कविताओं में दृष्टिगोचर होता है।

2.3.4 सांकेतिक दाम्पत्य-भाव-संबंध : संतकवि महात्मा कबीरदास द्वारा प्रतिपादित दाम्पत्य रागानुराग एवं अभिव्यक्त सांकेतिक शब्दावली कवयित्री की रहस्य-भावना में भी दृष्टिगत होती है।

इन्हीं तत्वों का समंजित स्वरूप कवयित्री की रहस्यानुभूति के अंग हैं जो उनके गीतों एवं उनकी कविताओं से होते हुए सहृदयों तक पहुँचा है और उनकी पार्थिव भाव-दृष्टि को उदात्त रूप प्रदान कर उनके रसानुभव को लोकोत्तर आनन्द के समकक्ष ले जा पाया है।

2.4 महादेवी वर्मा की रहस्यवादी चेतना की विशेषताएँ

चिर विरहिणी महादेवी वर्मा की रहस्यवादी चेतना अनेकानेक विशेषताओं से युक्त है जिनमें से निम्नलिखित विशेषताएँ ऐसी हैं जो उनकी रहस्याभिव्यक्ति को विशिष्ट, पृथक, व्यापक एवं उदात्त बनाती हैं–

(i) कवयित्री महादेवी वर्मा की रहस्य-भावना अपनी अनुभूतिप्रवणता एवं विरहजन्य आकुल प्रणय-निवेदन के फलस्वरूप अनुपम बन पड़ी है। पाश्चात्य नीरवतावादी रहस्यवादियों की भाँति कवयित्री वेदनानुभूति को अपनी रहस्यानुभूति का आवश्यक अंग मानती हैं।

(ii) उनकी रहस्यवादी चेतना भावनात्मक होते हुए भी व्यावहारिक है क्योंकि उसमें

लोकमंगलविधायिनी पीड़ा को आत्मसात करने की प्रवृत्ति विद्यमान है। कवयित्री अपने विरह-वेदनासिक्त जीवन को मनुष्य-मात्र की सेवा के निमित्त अर्पित कर देने को इच्छुक हैं। जिस प्रकार नभ में उमड़ने-घुमड़ने वाले बादल (बदली) अपना सर्वस्व लुटाकर इस धरती के अणु-परमाणु को अमरत्व प्रदान करते हैं, ठीक उसी प्रकार कवयित्री भी अपना सर्वस्व समर्पित कर मिट जाने की आकांक्षी हैं --

मैं नीर भरी दुख की बदली !

....

परिचय इतना इतिहास यही

उमड़ी कल थी मिट आज चली !

(उपरिवत् : 85)

कवयित्री महादेवी वर्मा इस समस्त प्रकृति-जगत में अपने अज्ञात प्रियतम की छाया निहारती हैं। अपने प्रिय के प्रति व्यक्त उनका रागात्मक सम्बन्ध इस समूची प्रकृति में, इसके कण-कण, जीव-जन्तुओं समेत प्राणीमात्र में विलीन हो गया है। कवयित्री की कविताओं, उनके निबंधों, रेखाचित्रों एवं संस्मरणों में उनका यही द्रवित करुणाभाव विकसित होकर पूर्णतः व्याप्त होता दृष्टिगोचर होता है। उनकी रहस्यवादी चेतना में उनके प्रियतम का पथ आलोकित करने की भावना विद्यमान है जो केवल विश्वसेवा से – अर्थात् साधक-आत्मा-रूपी दीपक के निरन्तर प्रज्वलित होकर ऊर्ध्वगामी होने से ही संभव हो सकता है –

मधुर मधुर मेरे दीपक जल !

युग युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिपल,

प्रियतम का पथ आलोकित कर !

(उपरिवत् : 56)

(iii) कवयित्री की रहस्यवादी चेतना में संदेशों के आदान-प्रदान के कई स्थल वर्णित हुए हैं। प्रियतम अज्ञात, प्रियतम का रूप, नाम, पता अज्ञात – संदेशवाहक जाए भी तो जाए कैसे? प्रेयसी साधिका संदेश भेजे भी तो कैसे ? ऐसे अनेक भावों से युक्त कविताएँ कवयित्री ने रची हैं। एक स्थल द्रष्टव्य है जहाँ वे अपने दृग-जल की मसि पर अपने अक्षय श्वासों के अक्षर अंकित कर अपनी बेसुधी का बयान कर रही हैं–

कैसे संदेश प्रिय पहुँचाती !

दृग-जल की सित मसि है अक्षय ;

मसि-प्याली, झरते तारक-द्वय ;

पल पल के उड़ते पृष्ठों पर,

सुधि से लिख श्वासों के अक्षर –

मैं अपने ही बेसुधपन में

लिखती हूँ कुछ, कुछ लिख जाती !

(उपरिवत् : 60)

(iv) महान कवयित्री महादेवी वर्मा ने अपनी रहस्य-भावना की अभिव्यक्ति के लिए बारम्बार दीपक को रूपक के रूप में ग्रहण किया है। दीपक को साधक-आत्मा का प्रतीक मानती हुई उसकी वर्ती के माध्यम से मानव-जीवन के दुःख-शोक-रूपी अंधकार को अध्यात्म-प्रेम के दिव्य प्रकाश से दूर करने की उन्होंने कल्पना की है। इसी दीपक के रूपक का निर्वाह उनकी अनेक कविताओं में परिलक्षित होता है –

यह मन्दिर का दीप इसे नीरव जलने दो।

(वर्मा 1976 : 81)

किन उपकरणों का दीपक किसका जलता है तेल?

(उपरिवत् : 75)

सब बूझे दीपक जला लूँ !

(उपरिवत् : 79)

पुजारी दीप कहीं सोता है !

(उपरिवत् : 83)

(v) कवयित्री की रहस्यवादी चेतना पर विद्वान-विचारकों ने अनेक आक्षेप लगाए हैं – फिर चाहे वह उनकी अनुभूति की यथार्थता के संबंध में हो, या उनकी भावना को प्रेम वंचना-जन्य कुंठा का व्यक्त रूप मानने के सम्बन्ध में हो, या उसे लौकिक अनुभूति का परिवर्तित रूप मानने में ही हो। लेकिन कवयित्री महादेवी वर्मा ने अपने साधना-पथ की अडिगता, निश्छलता, निस्वार्थता, त्यागमयता एवं लोककल्याणकारिणी भाव-दृष्टि के माध्यम से ऐसी शंकाओं एवं आक्षेपों को सर्वथा निर्मूल कर दिया है। यह उनकी रहस्य-भावना की एक अनूठी विशेषता है। इस साधना-पथ पर अनेक रोड़ों का सामना करती, अनेक विपरीत विचारों से होकर गुजरती अविचलित, अडिग एवं अटल बनी रहने वाली कवयित्री ने स्वयं 'यामा' की भूमिका में लिखा है –

मार्ग चाहे जितना अस्पष्ट रहा, दिशा चाहे जितनी कुहराच्छन्न रही, परन्तु भटकने, दिग्भ्रांत होने और चली हुई राह में पग-पग गिनकर पश्चाताप करते हुए लौटने का अभिशाप मुझे नहीं मिला है। मेरी दिशा एक और मेरा पथ एक रहा है ; केवल इतना ही नहीं वे प्रशस्त से प्रशस्ततर और स्वच्छ से स्वच्छतर होते गए हैं।

(गुप्त 1969 : 176)

2.5 तुलनात्मक समीक्षा

अपनी रहस्यानुभूति के असीम गगनांचल में विहंगिनी की भाँति सदा विचरण करती रहने वाली

कवयित्री महादेवी वर्मा की रहस्यवादी चेतना की तुलना उनके कुछेक पूर्ववर्ती एवं समकालीन कवि-कवयित्रियों से करना यहाँ असंगत न होगा।

भक्तिकाल के महान साधक महात्मा कबीरदास और छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा – दोनों ही भारतीय रहस्यवादी परम्परा के श्रेष्ठ प्रतिनिधि हैं। दोनों की ही मानसिक पृष्ठभूमि का निर्माण एवं अद्वैत-भावना का विकास भारतीय वेदान्त के आधार पर हुआ है। दोनों ने ही अपने आराध्य को प्रियतम या पति के रूप में स्वीकार किया है। विरह और मिलन की अनुभूतियाँ न्यूनाधिक रूप में दोनों में पायी जाती हैं। लेकिन महात्मा कबीरदास में ये अनुभूतियाँ प्रबल वेग के साथ प्रवाहित होती हैं, उसमें भावावेग का आधिक्य है ; जबकि महादेवी वर्मा की रहस्यानुभूति क्रमशः उद्वेलित होती हुई धीर, शान्त एवं संयमित गति से लक्ष्य की ओर अग्रसरित होती है। साधना का बल एवं अनुभूति की गम्भीरता जहाँ कवयित्री महादेवी वर्मा की अपेक्षा महात्मा कबीरदास में अधिक है, तो वहीं कलात्मक सौन्दर्य के सन्दर्भ में कल्पना-शक्ति, संचारी भावों का वैविध्य एवं अभिव्यक्ति की चित्रमयता में महात्मा कबीर की तुलना में कवयित्री वर्मा की सफलता अधिक दृष्टिगोचर होती है। इसके अतिरिक्त कवयित्री में साधिका के व्यक्तित्व की विशिष्ट प्रवृत्तियाँ, प्रेयसी के भावों का उतार-चढ़ाव, विश्वव्यापी चेतना, सम्प्रदाय-निरपेक्ष दृष्टि, प्रकृति का मानवीकृत रूप, जगत के प्रति करुण दृष्टि जैसी विशेषताएँ भी हैं। वस्तुतः महात्मा कबीरदास एवं कवयित्री वर्मा की रहस्य-भावनाओं पर उनके युग एवं परिस्थितियों का प्रभाव परिलक्षित होता है, जिसके कारण दोनों ही विभूतियों द्वारा अभिव्यंजित रहस्य-भावनाएँ अनुपम एवं विशिष्ट बन पड़ी हैं।

'पद्मावत' महाकाव्य के प्रणेता प्रसिद्ध सूफी कवि मलिक मुहम्मद जायसी से भी कवयित्री महादेवी वर्मा की तुलना की जा सकती है। कवयित्री ने 'पद्मावत' में अभिव्यक्त प्रेम-साधना को कमोबेश स्वीकार करते हुए भावप्रवण रहस्य-भावना से संवलित कविताओं की रचना की। लौकिक प्रेम की तीव्रता एवं विरहानुहुति की प्रगाढ़ता सूफी कवियों से ही कवयित्री ने ग्रहण की है। यहाँ एक बात अवश्य उल्लेखनीय है कि 'पद्मावत' में व्यक्त प्रेम एवं विरह प्रत्यक्षतः पद्मावती एवं नागमती से सम्बद्ध है, महाकवि जायसी से नहीं। अतः रहस्यानुभूति के क्षेत्र में प्रणयानुभूति एवं विरह-निवेदन का स्वगत स्वरूप जायसी में प्राप्त नहीं होता।

मध्यकालीन साहित्य-साधना में तपोरत होकर अपने एकनिष्ठ, पवित्र, अटल एवं पूर्णरूपेण समर्पित प्रेमाभिव्यंजना द्वारा प्रसिद्धि प्राप्त करने वाली अनन्य साधिका मीराँबाई से कवयित्री महादेवी वर्मा की समानता बतलायी जाती है। 'कृष्ण-प्रेम-दीवानी' मीराँबाई की ही भाँति कवयित्री

महादेवी वर्मा भी अपने अज्ञात, निर्गुण, निराकार, सर्वव्यापी प्रियतम के प्रेम में निमज्जित होकर प्रणय एवं विरह-निवेदन करती हैं। दोनों ही कवयित्रियों की अनुभूतियों में एकनिष्ठता, अडिगता, त्यागमयता, सहिष्णुता, परदुःखकातरता लक्षित की जा सकती है। लेकिन रहस्य-भावना के सन्दर्भ में कवयित्री मीराँबाई रहस्यवादिनी की अपेक्षा भक्त-साधिका अधिक थीं, जबकि कवयित्री महादेवी वर्मा रहस्य भाव-दृष्टिसम्पन्न साधिका हैं।

आधुनिककालीन कवियों में कवयित्री महादेवी वर्मा की रहस्य-भावना की तुलना उनके समकालीन कवियों – बाबू जयशंकर 'प्रसाद', सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' एवं सुमित्रानन्दन पन्त से भी की जाती है। शैव दर्शन (प्रसाद), अद्वैत-दर्शन (निराला) एवं चैतन्य मत के अक्षर सत्य के विश्वासी (पन्त) इन कवियों की रहस्यवादी भाव-दृष्टि में निर्गुण-निराकार के प्रति जिज्ञासा, आस्था एवं मिलन के भाव अवश्य लक्षित होते हैं जो कवयित्री महादेवी वर्मा द्वारा भी अभिव्यंजित हुए हैं। लेकिन इन कवियों में यह भाव-दृष्टि अक्षुण्ण नहीं पायी जाती। महाकवि प्रसाद द्वारा व्यक्त लौकिक प्रेम दूसरे ही संस्करण में दिव्य प्रेम बन जाता है, कविवर पन्त रहस्यवादी से प्रगतिवादी बन जाते हैं और महाप्राण 'निराला' भी अपनी आस्था को अडिग-अटल नहीं रख पाते। अतः इन कवियों की परिवर्तनशील रहस्योन्मुख प्रवृत्तियों से कवयित्री महादेवी वर्मा की अविच्छिन्न रहस्यानुभूति की निरपेक्ष तुलना नहीं की जा सकती।

कवयित्री महादेवी वर्मा की रहस्यवादी चेतना की यथार्थता, गम्भीरता एवं सर्वव्यापकता के कारण वे एवं उनकी भावाभिव्यंजना अनुपम और अनूठी हैं। रहस्यवाद के उन्मुक्त प्रांगण में विहार करते हुए उन्होंने अपनी काव्य-शक्ति एवं सामर्थ्य के बल पर उसे जो नूतन आयाम प्रदान किया है, उसके सम्बन्ध में टिप्पणी करते हुए प्रसिद्ध विद्वान डॉ॰ तारकनाथ बाली ने लिखा है –

> ...महादेवी की अनुभूति केवल व्यक्तिपरक आध्यात्मिकता की अनुभूति ही नहीं है, उसमें लोक-कल्याण की भावना भी है जो अडिग आस्था, अटूट साधना एवं आत्मबलिदान के रूप में गीतों में बिखरी हुई मिलती है। इस प्रकार महादेवी ने मध्यकालीन रहस्य-भावना की परम्परा को स्वीकार करके उसे लोक-कल्याण के साथ संयुक्त कर अपने युग-बोध के अनुरूप ढालने की कोशिश की है। यह रहस्यवाद का एक नया आयाम है जिसके उद्घाटन का श्रेय महादेवी को है।

(नगेन्द्र, संपा. 2007 : 554)

3. निष्कर्ष :

रहस्यवादी चेतना के आलोक में कवयित्री महादेवी वर्मा की कविताओं पर किए गए पूर्वोक्त

विवेचन के उपरान्त निष्कर्षतः हम यही कह सकते हैं कि कवयित्री महादेवी वर्मा ने अपनी रहस्य-भावना के आलम्बन निर्गुण-निराकार सर्वव्यापी प्रियतम के प्रति अपनी प्रणयानुभूति, ऐक्यानुभूति एवं विरहानुभूति का इतिहास व्यक्त कर अपनी रहस्य-साधना को जिज्ञासा-जनित आस्था से ले जाते हुए महामिलन के उच्च शिखर पर आरूढ़ करा दिया है। उनकी इस रहस्यवादी चेतना में एक ओर जहाँ मानवीकृत प्रकृति का निवास है, तो वहीं दूसरी ओर विश्वव्यापी सेवाभाव की विद्यमानता भी है। उनकी इस रहस्यानुभूति में एक तरफ जहाँ पूर्व-प्रचलित परम्परा का निर्वाह हुआ है, तो वहीं दूसरी तरफ कवयित्री की अनूठी रचनाशील वृत्ति के कारण उसमें मौलिकता एवं नयेपन का भी शिलान्यास हुआ है। दार्शनिक भावधारा, उच्चादर्श-समन्वित जीवन-साधना तथा उदात्त भक्ति-भावना को अपनी अलौकिक प्रेममिश्रित रहस्याभिव्यक्ति के माध्यम से अभिव्यंजित करते हुए कवयित्री ने रससिक्त एवं आलंकारिक गीतों एवं कविताओं की सर्जना की है। उनकी तीव्र एवं प्रगाढ़ प्रेमानुभूति और रहस्यानुभूति के सम्बन्ध में अपने भाव व्यक्त करते हुए 'प्रकृति के सुकुमार कवि' सुमित्रानन्दन पन्त ने कवयित्री महादेवी को 'नवयुग की मीराँ' के पद पर आसीन करते हुए लिखा है–

> नवयुग की मीरा बनकर, तुम जग-प्रांगण में छायीं।
>
> प्रिय तरु की मधु लतिका-सी, कुछ भेद-भरी परछायीं ॥

(राय 2005 : 228)

अस्तु, हिन्दी-भारती की अनन्य पुजारिन कवयित्री महादेवी वर्मा की कविताओं में चित्रित उनकी रहस्यवादी चेतना उनके समग्र कवि-व्यक्तित्व का वह प्रकाशपुंज है जिसके चारों ओर उनकी भावभीनी अभिव्यक्ति के अन्य रूप रश्मि-किरणों की भाँति बिखरे पड़े रहते हैं।

ग्रंथ-सूची

गुप्त, गणपतिचन्द्र. महादेवी : नया मूल्यांकन. प्रथम. शिमला : भारतेन्दु भवन, 1969.

गुप्त, शान्तिस्वरूप. साहित्यिक निबन्ध. अष्टम. दिल्ली : अशोक प्रकाशन, 1974.

जैन, निर्मला, संपा. महादेवी संचयिता. द्वितीय. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2008.

नगेन्द्र, संपा. हिन्दी साहित्य का इतिहास. तैतीसवाँ. नोएडा : मयूर पेपरबेक्स, 2007.

निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी. अपरा. पहला. दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 1992.

राय, बाबू गुलाब. हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास. पचासवाँ. आगरा : लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, 2005.

वर्मा, धीरेन्द्र, प्रधान संपा. हिन्दी साहित्य कोश (भाग-2). द्वितीय.वाराणसी : ज्ञानमण्डल लिमिटेड, सं॰ 2043.

वर्मा, महादेवी. परिक्रमा. द्वितीय. इलाहाबाद : साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड, 1976.

---. नीहार. अष्टम. इलाहाबाद : साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड, 1998.

शुक्ल, आचार्य रामचन्द्र. हिन्दी साहित्य का इतिहास. बाईसवाँ. वाराणसी : नागरी प्रचारिणी सभा, सं॰ 2045.

सिंह, विजलपाल, संपा. छायावाद के प्रतिनिधि कवि. षष्ठ. वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन, 1998.

संपर्क-सूत्र :

सहायक अध्यापक

हिन्दी विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय, असम

ई-मेइल : poojasarma2015@gmail.com

मोबाइल न॰ : 8638964510